The Research Dialogue

An Online Quarterly Multi-Disciplinary
Peer-Reviewed / Refereed Research Journal
ISSN: 2583-438X
Volume-2, Issue-1, April-2023
www.theresearchdialogue.com

भारतीय रंगमंच (थिएटर)

अलक्षेन्द्र प्रभाकर

एमटीए, नेट, नेट–नेशनल फैलोशिप
(थएटर आर्ट्स) पीएच.डी स्कॉलर (थिएटर आर्ट्स)
एकेडमी ऑफ थिएटर आर्ट्स, मुम्बई विश्वविद्यालय
(थिएटर एण्ड फिल्म डायरेक्टर)

आज इण्टरनेट का युग है किन्तु क्या हमने कभी यह सोचा है कि जब मोबाइल, इण्टरनेट, कम्प्यूटर अथवा टेलीविजन जैसे मनोरंजन के आधुनिकतम साधन उपलब्ध नहीं थे तो हमारे पूर्वज अपना मनोरंजन कैसे किया करते थे ? उस समय मनोरंजन के अत्यन्त सीमित साधन थे। उनमें से सबसे ज्यादा प्रसिद्ध साधन था रंगमंच या थिएटर।

रंगमंच दो शब्दों से मिलकर बना है– रंग और मंच। रंग से आशय कला और मंच से आशय किसी विशिष्ट स्थान या प्लेटफार्म से है। दूसरे शब्दों में, जब किसी मंच अथवा प्लेटफार्म से अपनी कलाओं–संगीत, नाटक, नृत्य आदि का प्रदर्शन किया जाता है– रंगमंच कहलाता है।

भारत सहित एशिया के कुछ देशों में इस स्थान को रंगमंच के नाम से पुकारा जाता है तो पश्चिमी देशों में इसे थिएटर कहा जाता है। रंगमंच को रंगशाला, प्रेक्षागार, नाट्यशाला, ओपेरा, सिनेमा आदि नामों से भी पुकारा जाता है।

रंगमंच–विधान, भारतीय नाट्यकला का प्रारम्भ से अभिन्न अंग रहा है। संसार में प्राचीनतम रंगमंच के विवरण भारत में उपलब्ध होते हैं। ऋग्वेद में शैलूष और नृत धातु के प्रयोग इस बात के प्रमाण हैं कि रंगमंच

का विकास बहुत पहले हो चुका था। 'नाट्यशास्त्र' के प्रणेता भरत के द्वारा विश्वकर्मा को रंगमंच का निर्माता मानना भी इसी तथ्य को पुष्ट करता है। रंगमंच की विशेषता बताते हुए डॉ. सुरेश चन्द्र निर्मल ने कहा है कि जब हम यह कहते हैं कि नाटक की महत्ता उसके काव्यगुणों पर निर्भर तो रहती है किन्तु उसकी सच्ची कसौटी रंगमंच ही है, तब भी रंगमंच का अर्थ स्थान–विशेष न होकर नाटक की अभिनेय–स्थिति से ही होता है। दूसरे शब्दों में– अमुक भाषा का रंगमंच कहने का अर्थ होता है कि किसी भाषा–विशेष के नाटकों के खेलने–देखने आदि का प्रचार किसी काल–विशेष में क्या रहा है अथवा वर्तमान में नाटक किस सीमा तक लोकमानस का मनोरंजन करने का साधन बना हुआ है। हिन्दी–रंगमंच कहने का आशय भी यही होता है कि हिन्दी–नाटकों का अभिनय किस मात्रा में और किस सीमा तक होता रहा है अर्थात् हिन्दी में नाटक की अभिनेय स्थिति क्या है, वह किस सीमा तक लोकमानस का मनोरंजन करती है– इस अर्थ में रंगमंच का अभिप्राय थिएटर से होता है अर्थात् नाटक के स्टेज, (खेले जाने) होते रहने की क्या स्थिति है और वह अपनी प्रगति एवं लोकप्रियता की किस सीमा को पहुँची हुई है। नाटक का चलन कितना है और लोग उसको कितना पसन्द करते हैं, यदि उसकी रंगमंचीयता में विशेष प्रगति नहीं है तो क्यों ?"

हिन्दी का जन्म से ही यह दुर्भाग्य रहा है कि उसमें नाटक और परिणामतः उसका रंगमंच पूरी तरह उपेक्षित और अविकसित रहा। सच तो यह है कि दसवीं शताब्दी से अठारहवीं शताब्दी तक हिन्दी रंगमंच जैसी कोई वस्तु प्रकाश में ही नहीं आयी। इतना अवश्य है कि जनसामान्य के मनोरंजन के लिए धार्मिक कृत्यों से जुड़े जन–नाट्यरूपों और खुले सामयिक रंगमचों के रूप में हिन्दी रंगमंच का चलन रहा।

16 जुलाई सन् 1893 में नागरी प्रचारिणी सभा काशी की स्थापना हुई। सभा के द्वारा रंगमंच स्थापित करने के प्रयासों पर चर्चा करते हुए बच्चन सिंह ने लिखा है कि "सभा की स्थापना के कुछ दिन बाद हिन्दी रंगमंच स्थापित करने का प्रयास किया गया किन्तु खेद है कि आज तक हिन्दी रंगमंच की स्थापना को कौन कहे उसकी रूपरेखा भी नहीं निश्चित की जा सकी। भारतेन्दु तथा उनके सहयोगी पारसी रंगमंच के कुरुचिपूर्ण वातावरण से अच्छी तरह परिचित थे। अपने 'नाटक' में उन्होंने लिखा है– काशी में पारसी नाटकवालों ने नाच–घर में जब शकुन्तला नाटक खेला और उसमें धीरोदात्त नायक दुष्यन्त खेमटे–वालियों की तरह कमर पर हाथ रखकर मटक–मटक कर नाचने और 'पतरी कमर बल खाय' यह गाने लगा तो डॉ. थिबो, बाबू प्रमदादास मित्र प्रभृति विद्वान यह कहकर उठ आए कि अब देखा नहीं जाता। ये लोग कालिदास के गले पर छुरी फेर रहे हैं। इन कम्पनियों का व्यावसायिक दृष्टिकोण किसी प्रकार स्वस्थ नहीं कहा जा सकता। इनका चरम लक्ष्य पैसा कमाना था। देश का सांस्कृतिक परिष्कार इनकी कल्पना के बाहर की वस्तु थी। सन् 1903 में 'हिन्दी प्रदीप' के सम्पादकीय में पारसी–थिएटर की कड़ी आलोचना की गई। पारसी थिएटर के विरोध में द्विवेदी–युग में कुछ

अव्यावसायिक मण्डलियाँ स्थापित की गईं। इस समय कानपुर, प्रयाग और काशी हिन्दी के तीन प्रमुख केन्द्र थे। कानपुर में भारतेन्दुकाल में, कुछ नाट्यमण्डलियाँ स्थापित की गईं किन्तु वे अकाल में काल–कवलित हो गईं। सन् 1898 में प्रयाग में रामलीला नाटक–मण्डली स्थापित की गई। सन् 1908 में इस मण्डली का पुनरुद्धार माधव शुक्ल ने किया। इस मण्डली ने 'महाराणा प्रताप' और माधव शुक्ल का 'महाभारत' आदि नाटकों को रंगमंच पर सफलतापूर्वक खेला।"

रंगमंच के सम्बन्ध में काशी की नाट्य–मण्डलियों का उल्लेख करना आवश्यक है। यह निर्विवाद सत्य है कि काशी में नाट्य–मण्डलियों की स्थापना में अधिक उत्साह दिखाई देता है। सन् 1908 में काशी के स्थानीय हिन्दू स्कूल में राधाकृष्ण का 'राणा प्रताप' खेला गया। उस नाटक को देखने के लिए काशी के प्रसिद्व नगर–सेठ बीसू जी के पौत्र बाबू कृष्णदास साह गए हुए थे। बाबू कृष्णदास जी उस नाटक से इतने प्रभावित हुए कि दूसरे दिन हरिदास माणिक और धर्मदत्त शास्त्री को बुलाकर 'राणा प्रताप' के अभिनय के सम्बन्ध में परामर्श किया। उनका विचार था कि इसका अभिनय कहीं शहर में किया जाए। अर्थाभाव के कारण माणिक जी तथा शास्त्री जी ने इसके अभिनय में असमर्थता व्यक्त की। इस सम्बन्ध में काशी के रईसों की एक सभा बुलाई गई और एक नाट्य–मण्डली की स्थापना की गई। इसका नाम रखा गया– 'नागरी नाट्यकला प्रवर्तक मण्डली।' इसके नामकरण पर नागरी प्रचारिणी सभा के नाम का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है। 'नाट्यकला प्रवर्तक' के मूल में पारसी नाटक कला की प्रतिक्रिया अनुस्यूत है। बाद में पारस्परिक मतभेद के कारण यह नाटक–मण्डली दो मण्डलियों मे बंट गई– नागरी नाटक मण्डली और भारतेन्दु नाटक मण्डली। नागरी नाटक मण्डली ने पण्डित सुधाकर द्विवेदी को सभापति बनाया। नागरी नाटक मण्डली सभा के संस्थापक श्यामसुन्दर दास से साहित्यिक परामर्श लिया करती थी। कृष्णगढ़–नरेश की सहायता से इस मण्डली ने कबीरचौरा में एक रंगमंच का निर्माण भी किया। माधव शुक्ल ने कलकत्ता में 'हिन्दी नाट्य परिषद' के नाम से एक नाटक मण्डली की स्थापना की।

नागरी प्रचारिणी सभा की हीरक जयन्ती (सम्वत् 2010) के अवसर पर गीति नाट्य सत्र का उद्घाटन करते हुए उत्तर प्रदेश के शिक्षा मंत्री हरगोविन्द सिंह ने हिन्दी में रंगमंच की उपेक्षा पर अपने अभिभाषण में कहा था, "इस अवसर पर मैं हिन्दी में रंगमंच की स्थापना की ओर भी आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ। हमसे पहले भी आपका ध्यान इस ओर गया है किन्तु जिस बात का आश्चर्य है वह यह है कि काशी जैसे स्थान में भी और यहाँ की कतिपय प्रतिष्ठित संस्थाओं के रहते हुए भी अभी तक हिन्दी की यह आवश्यकता पूरी नहीं की जा सकी। मैं यहाँ की उन संस्थाओं को जानता हूँ जिनसे किसी–न–किसी प्रकार का सरकारी सम्बन्ध है और उनके कार्यक्रम का कुछ थोड़ा–बहुत परिचय मुझको मिला करता है। उसको देखते हुए मुझे ऐसा लगता है कि यह उनके लिए नितान्त असम्भव अथवा अनपेक्षित भी नहीं है। फिर भी या तो संगठन की कमी अथवा आवश्यक धन

के अभाव में यह कार्य अभी तक रुका पड़ा है। सहसा इस बात का विश्वास नहीं होता कि हिन्दी जगत् अब तक केवल इन दो कठिनाइयों के कारण ही रंगमंच के अभाव को सहन करता जा रहा है। आज जब विदेशों से सांस्कृतिक और साहित्यिक प्रतिनिधि–मण्डल आए दिन आ रहे हैं और यहाँ की विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियों एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों का प्रत्यक्ष देख–सुनकर उनका अध्ययन कर रहे हैं तो ऐसी दशा में हिन्दी के लिए यह स्थिति न केवल अशोभनीय है वरन् अहितकर भी है। जो लोग यहाँ आते हैं उनके सामने हिन्दी रंगमंच का न तो कोई परिष्कृत रूप रखा जा सकता है और न उन्हें हिन्दी नाटकों का अभिनय देखने का सुअवसर ही मिलता है। आज भी विदेशों में रंगमंच और नाटक को वहाँ के सांस्कृतिक जीवन में एक बहुत ही आदर का स्थान प्राप्त है। देश की संस्कृति और उसकी साहित्यिक चेतना का उदाहरण सिनेमा के चलचित्रों के द्वारा नहीं प्रस्तुत किया जा सकता। व्यावहारिक जीवन में सिनेमा ने निश्चय ही एक स्थान ले लिया है किन्तु वह हमारी परिष्कृत साहित्यिक मनोवृत्ति का परिचायक नहीं है और न उसके द्वारा हम किसी उत्कृष्ट अभिनय का प्रदर्शन कर सकते हैं। जिस देश में नाटक और अभिनय–कला का विकास कई शताब्दियों पहले प्रारम्भ हुआ हो वहाँ इस प्रकार की हीनता असहनीय होनी चाहिए।"

भारत में प्राचीन रंगमंच (थिएटर)

चैपलिन थिएटर– यह पश्चिम बंगाल के कलकत्ता शहर में स्थित है। इसकी स्थापना सन् 1907 में जमशेद जी फ्राम जी मदन ने की थी। उस समय इसका नाम एलफिंस्टन पिक्चर पैलेस था।

जमशेद जी फ्राम जी मदन का पेशेवर नाम जेएफ मदन था। इनका जन्म 27 अप्रैल सन् 1857 में बम्बई के एक पारसी परिवार में हुआ। 66–67 वर्ष की आयु में इनकी मृत्यु 28 जून सन् 1923 को हुई।

जे एफ मदन एक भारतीय थिएटर और फिल्म मैग्नेट थे जो भारत में फिल्म निर्माण के अग्रदूतों में से एक थे। सन् 1902 में वह कलकत्ता चले गए जहाँ उन्होंने एलफिंस्टन बायोस्कोप कम्पनी की स्थापना की। उन्होंने सन् 1917 में 'सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र' और सन् 1919 में 'बिल्वमंगल' का निर्माण किया। 'सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र' कलकत्ता में शूट की जाने वाली पहली फीचर फिल्म थी। एलफिंस्टन का 1919 में मदन थिएटर्स लिमिटेड में विलय हो गया जिसके माध्यम से बंगाली के कई सबसे लोकप्रिय साहित्यिक कार्यों को मंच पर लाया गया। सन् 1920 और 1930 के दशक में मदन थिएटर भारतीय थिएटर में एक प्रमुख शक्ति थी।

पहली बंगाली फीचर फिल्म 'बिल्वमंगल' को पहली बार कार्नवालिस थिएटर (अब 'श्री' सिनेमा के नाम से जाना जाता है।) में दिखाया गया। इलेक्ट्रिक थिएटर (अब 'रीगल' सिनेमा) ग्रैंड ओपेरा हाऊस (अब ग्लोब सिनेमा) और क्राउन सिनेमा (अब उत्तरा सिनेमा)– सभी मदन थिएटर के स्वामित्व में थे।

डिलाइट सिनेमा, दिल्ली– डिलाइट सिनेमा दिल्ली के थिएटरों के इतिहास से जुड़ा हुआ है। इसकी स्थापना प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू के दिल्ली में स्थलों के निर्माण के आहवान के जवाब में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सन् 1954 में बृजमोहन लाल ने की थी। लिबर्टी, मोहिनी, पायल और नाज के साथ डिलाइट दिल्ली में आजादी के बाद स्थापित होने वाले पहले थिएटरों मे से एक था। डिलाइट में प्रदर्शित की जानेवाली सबसे पहली फिल्म राजकपूर की 'अंगारे' थी जिसका प्रदर्शन 1954 में किया गया जिसमें बड़ी संख्या में लोग एकत्र हुए थे। इसके तुरन्त बाद डिलाइट सिनेमा देखनेवालों के लिए सबसे बड़े नामों में से एक बन गया। तत्कालीन अन्य सिनेमाघरों की तरह डिलाइट ने सिनेमा और लाइव शो दोनों की मेजबानी की। पृथ्वीराज कपूर के पृथ्वी थिएटर ने उनके नाटकों का प्रदर्शन किया। डिलाइट से रिलीज होने वाली फिल्मों में वक्त (1965), हमराज (1967), वन्दना (1975), हादसा (1983), कयामत (1983), खलनायक (1993) जैसी फिल्मों के नाम उल्लेखनीय हैं। इतना ही नहीं, डिलाइट को भारतीय राजनेताओं के बीच भी लोकप्रियता मिली। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, जवाहर लाल नेहरू, इन्दिरा गांधी, मोरारजी देसाई ने कई बार थिएटर का दौरा किया । 42 साल तक डिलाइट के मैनेजर रहे राजकुमार मेहरोत्रा के अनुसार लालकृष्ण आडवाणी ने वहाँ कम–से–कम दस फिल्में देखीं।

रीगल थिएटर– यह दिल्ली का सबसे पुराना और पहला थिएटर माना जाता है। जब नई दिल्ली का निर्माण हुआ तो उसी दौरान कनॉट प्लेस सन् 1931 में बनकर तैयार हुआ। रीगल भी सन् 1934 मे बना अर्थात् नई दिल्ली और रीगल ने लगभग एक साथ संसार में कदम रखा। शुरूआती दौर में रीगल में अंग्रेजी नाटक खेले जाते थे जिन्हें देखने लार्ड माउण्टबेटन अपनी पत्नी के साथ आते थे। देश के पहले राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद और प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने यहाँ कई फिल्में देखीं किन्तु यह थिएटर 84 साल बाद मार्च सन् 2017 में बन्द कर दिया गया। नलिन चौहान ने पंजाब केसरी के 'यादों के झरोखे' में 'रीगल' शीर्षक आलेख में लिखा है कि दिल्ली के कनॉट प्लेस में स्थित रीगल सिनेमाघर इस महीने (31 मार्च) बन्द हो जायेगा। रीगल के मालिक इमारत के लिए सुरक्षा प्रमाण–पत्र लेने में असफल होने के कारण अब राजधानी के 84 साल पुराने सिनेमाघर में आखिरी बार अनुष्का शर्मा की फिल्म 'फिल्लौरी' दिखाई जायेगी। सिनेमाघर के बाहर चिपके नोटिस में लिखा है– मैनेजमेण्ट ने 31.03.2017 से बिल्डिंग में बिजनेस बन्द करने का फैसला लिया है। अंग्रेजी के प्रसिद्ध लेखक खुशवन्त सिंह 'सेलिब्रेटिंग दिल्ली' पुस्तक में बताते हैं कि उनके पिता (सरदार शोभा सिंह) नए शहर में एक सिनेमा रीगल का निर्माण करनेवाले पहले व्यक्ति थे। शुरू में उन्होंने खुद सिनेमा घर को चलाने की कोशिश की। रीगल का डिजाइन नई दिल्ली के वास्तुकार एडविन लुटियंस के दल के साथी वाल्टर स्काइज जार्ज ने तैयार किया था।

प्रिया थिएटर– यह दक्षिण कोलकाता के सबसे पुराने और वर्तमान लोकप्रिय सिंगल स्क्रीन थिएटरों में से एक है। वास्तव में यह पूर्वी भारत का पहला थिएटर था जहाँ कम्प्यूटराईज टिकट बुकिंग और ऑनलाइन टिकट बुकिंग की शुरूआत की गई थी।

रामप्रकाश सिनेमा– यह जयपुर, राजस्थान के सबसे पुराने सिनेमा हॉल में से एक प्रसिद्ध सिनेमा था जिसका उद्घाटन सन् 1879 में महाराजा स्वामी राम सिंह द्वितीय ने किया था। इसे पहली बार एक थिएटर के रूप में निर्मित किया गया था जहाँ देश–भर में नाटकों का प्रदर्शन होता था। वर्तमान में यह थिएटर बन्द हो गया है।

कैपिटल थिएटर– यह मुम्बई में स्थित है जिसे कुंवर जी पघतीवाला ने सन् 1879 में बनवाया था। यह मुम्बई के सबसे पुराने थिएटरों में से एक है। छत्रपति शिवाजी महाराज टर्मिनल्स के ठीक सामने स्थित कैपिटल थिएटर को सन् 1928 में मूवी थिएटर में बदल दिया गया। कैपिटल का नाम बदलने से पहले यह 'गेयटी थिएटर' के नाम से जाना जाता था।

सफायर थिएटर– यह भारत का प्रथम सबसे बड़ा मल्टी थिएटर कॉम्प्लैक्स था जो दक्षिणी शहर चेन्नई में स्थित था। सफायर ने जनता के लिए सन् 1964 में अपने दरवाजे खोले। इसमें चलने वाली पहली फिल्म 'क्लियोपेट्रा' थी। सफायर सम्भवतः भारत का पहला 70 एमएम का थिएटर था। इसमें तीन हॉल थे– सफायर, एमरॉल्ड और ब्लू डायमण्ड। ब्लू डायमण्ड और एमरॉल्ड दोनों ही छोटे थिएटर थे जिनमें 300 सीटों की व्यवस्था थी। ब्लू डायमण्ड ने अंग्रेजी जबकि एमरॉल्ड ने मुख्य रूप से हिन्दी और तमिल फिल्मों की स्क्रीनिंग की।

सफायर परिसर को सन् 1994 में स्थानीय राजनीतिक संगठन अखिल भारतीय द्रविड़ मुनेत्र कड़गम द्वारा अधिग्रहीत किया गया था। संगठन वहाँ अपना कार्यालय बनाना चाहता था। यद्यपि पूरे सफायर को ध्वस्त कर दिया गया किन्तु किन्हीं कारणों से अन्नामुक ने वहाँ अपना कार्यालय नहीं बनाया।

देश में आज भी कई पुराने थिएटर हैं जिनमें कुछ चल रहे हैं तो कुछ किन्हीं वजहों से ध्वस्त कर दिए गए। कुछ घाटा उठाते हुए भी अभी भी चल रहे हैं तो कुछ केवल इतिहास के पन्नों में गुम होकर रह गए। देश में थिएटर का लम्बा दौर रहा है और कला और समय की कसौटी पर खरा उतरने वाले ये थिएटर भारतीय थिएटर के इतिहास में मील के पत्थर माने जाते हैं।

सन्दर्भ

1. नाटक एकांकी एवं गीति नाट्य, पृष्ठ सं.–31–32, डॉ. सुरेश चन्द्र निर्मल, सरन प्रकाशन मन्दिर मेरठ

2. हीरक जयन्ती ग्रन्थ, नाटक, पृष्ठ 157–158, बच्चन सिंह, प्र. नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 2011

3. वही, पृष्ठ 158

4. हीरक जयन्ती ग्रन्थ, हरगोविन्द सिंह, अभिभाषण, पृष्ठ 50

5. प्रारम्भिक सिनेमा का विश्वकोश, टेलर और फ्रांसिस, पृष्ठ 580

6. पंजाब केसरी, मार्च 26, 2017 रिपोर्ट–नलिन चौहान

7. संगीत नाटक, खण्ड 36, अंक–7, संगीत नाटक अकादमी, पृष्ठ 13

8. द हिन्दू, 15 अक्टूबर, 2003 अंक

THE RESEARCH DIALOGUE

An Online Quarterly Multi-Disciplinary
Peer-Reviewed / Refereed Research Journal
ISSN: 2583-438X
Volume-2, Issue-1, April-2023
www.theresearchdialogue.com
Certificate Number-April-2023/23

Certificate Of Publication

This Certificate is proudly presented to

अलक्षेन्द्र प्रभाकर

for publication of research paper title

भारतीय रंगमंच (थिएटर)

Published in 'The Research Dialogue' Peer-Reviewed / Refereed Research Journal and E-ISSN: 2583-438X, Volume-02, Issue-01, Month April, Year-2023.

Dr.Neeraj Yadav
Executive Chief Editor

Dr.Lohans Kumar Kalyani
Editor-in-chief

Note: This E-Certificate is valid with published paper and the paper must be available online at www.theresearchdialogue.com